# महात्मा गांधी के राष्ट्रभाषा हिन्दी और देवनागरी लिपि विचार : युगीन सार्थकता

**प्रा. डॉ. सुरेखा प्रे. मंत्री**
*श्रीमती नानकीबाई वाधवानी महा.यवतमाल*
*surekhamantri11@gmail.com*

महात्मा गांधी का चिंतन समूची भारतीय संस्कृति और भाषा व्यवस्था का सुंदर निदर्शन है। वे मानवीय मूल्यों, सभ्यता, भाषा, लिपि, साहित्य, दर्शन, समाज, शिक्षा, पत्रकारिता – इन सभी आयामों में अग्रगामी दिखाई देते हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी और देवनागरी लिपि को लेकर उनके विचार न केवल उनके समय में पथप्रदर्शक रहे हैं आज भी उन्हें अंगीकार कर राष्ट्र की भावात्मक एकता, अखण्डता और विकास को आधार दिया जा सकता है। शिक्षा और अनुसंधान के क्षेत्र में मौलिक चिंतन एवं गुणवत्ता को संवर्धित किया जा सकता है।

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो, इसके लिए गांधी जी ने पहली समर्थ आवाज दशकों पहले उठाई थी। उन्होंने सन् 1906, 18 अगस्त को दक्षिण अफ्रीका से चार भाषाओं में प्रकाशित साप्ताहिक पत्र 'इंडियन ओपिनियन' के माध्यम से हिंदी की महिमा को रेखांकित किया। उन्होंने अपनी मातृभाषा गुजराती में एक पृष्ठ का लेख लिखा था। जिसका शीर्षक था 'भारत भारतीयों के लिए', जिसमें उन्होंने हिंदी को लोगों की राष्ट्रीय भावना से जोड़ते हुए इसकी विशेषताएँ गिनाई थीं। गांधी जी के शब्दों में "जब तक भारत के विभिन्न प्रदेशों में रहने वाले भारतीयों में से ज्यादातर लोग एक ही भाषा नहीं बोलने लगें, तब तक वास्तविक रूप में भारत एक राष्ट्र नहीं बन सकता। विभिन्न प्रदेशों में अंग्रेजी बोलने वाले लोग काफी मिल जाते हैं, किंतु उनकी संख्या बहुत कम है और हमेशा थोड़ी ही रहेगी। इसका मुख्य कारण यह है कि भाषा कठिन है और विदेशी है। साधारण मनुष्य इसे ग्रहण नहीं कर सकता, इसलिए यह संभव नहीं है कि अंग्रेजी के जरिये भारत एक राष्ट्र बन सके।"

उनकी दृष्टि में हिंदी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है। इस सिद्धांत को लेकर गांधी जी ने भारत में स्वाधीनता आंदोलन के साथ राष्ट्रभाषा आंदोलन भी चलाया। अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज्य' (1909) में शिक्षा शीर्षक के अंतर्गत अनुक्रमणिका अठारह में शिक्षा कैसे दी जाए? इस प्रश्न के समाधान में उन्होंने लिखा था, "हर एक पढ़े-लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा का, हिंदू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फारसी का और सबको हिंदी का ज्ञान होना चाहिए। कुछ हिंदुओं को अरबी, कुछ मुसलमानों, पारसियों को संस्कृत सिखानी चाहिए। उत्तर और पश्चिमी हिंदुस्तान के लोगों को तमिल सीखनी चाहिए, उसे उर्दू या नागरी लिपि में लिखने की छूट होनी चाहिए। हिंदू-मुसलमानों के संबंध ठीक रहें, इसलिए बहुत से हिंदुस्तानियों का इन दोनों लिपियों को जान लेना जरूरी है। ऐसा होने से हम आपस के व्यवहार से अंग्रेजी को निकाल सकेंगे। वे कहते हैं कि अगर हमें एक राष्ट्र होने का अपना दावा सिद्ध करना है, तो हमारी अनेक बातें एक सी होनी चाहिये। भिन्न-भिन्न धर्म और सम्प्रदायों को एक सूत्र में बांधने वाली हमारी एक सामान्य संस्कृति है। हमारी त्रुटियां और बाधायें भी एक सी हैं। मैं यह बताने की कोशिश कर रहा हूं कि हमारी पोशाक के लिए एक ही तरह का कपड़ा न केवल वांछनीय है, बल्कि आवश्यक भी है। हमें एक सामान्य भाषा की भी जरूरत है। देशी भाषाओं की जगह पर नहीं, परन्तु उनके सिवा। इस बात में साधारण सहमति है कि यह माध्यम हिन्दुस्तानी ही होना चाहिये, जो हिन्दी और उर्दू के मेल से बने और जिसमें न तो संस्कृत की और न फारसी या अरबी की ही भरमार हो। हमारे रास्ते की सबसे बड़ी रूकावट हमारी देशी भाषाओं की कई लिपियां है। अगर एक सामान्य लिपि अपनाना संभव हो, तो एक सामान्य भाषाओं का हमारा जो स्वप्न है अभी तो यह स्वप्न ही है। उसे पूरा करने के मार्ग की एक बड़ी बाधा दूर हो जायेगी।

गांधी जी ने 'हिंद स्वराज्य' में स्वराज्य के लिए अंग्रेजी शिक्षा के दुष्प्रभाव को लेकर कहा है कि करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली है, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी, उसने इस इरादे से अपनी योजना बनायी थी। ऐसा मैं नहीं सुझाना चाहता लेकिन उसके काम का नतीजा यही निकालता है, यह कितने दुख की बात है कि हम स्वराज्य की बात भी पराई भाषा में करते हैं। उनकी दृष्टि में "अंग्रेजी शिक्षा लेकर हमारे राष्ट्र को गुलाम बनाया है, अंग्रेजी शिक्षा में दम्भ, राग, जुल्म वगैरह बढ़े हैं। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त किये लोगों ने प्रजा को ठगने में, उसे परेशान करने में कुछ भी उठा नहीं रखा है। अब अगर अंग्रेजी शिक्षा पाए लोग उसके लिए कुछ करते हैं तो उसका हम पर कर्ज चढ़ा हुआ है, उसका कुछ हिस्सा ही हम अदा कर सकते हैं।" वे 'हिन्द स्वराज्य' के जरिए भारत को औपनिवेशिक गुलामी से मुक्ति का स्वप्न दिखाते हैं, जो शिक्षा पद्धति और माध्यम भाषा के बिना सम्भव नहीं है। इस पुस्तक में उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा की चकाचौंध के पीछे पलने वाली औपनिवेशिक मंशा का खुलासा किया था। मैकाले ने जिस शिक्षण की नींव डाली, वह गांधी जी के नजरिए से सचमुच गुलामी की नींव थी। वे लिखते हैं, यह भी जानने लायक है कि जिस पद्धति को अंग्रेजों ने उतार फेंका है, वही हमारा शृंगार बनी हुई है। वहाँ शिक्षा की पद्धतियाँ बदलती रही हैं। जिसे उन्होंने भुला दिया है, उसे हम मूर्खतावश चिपटाये रहते हैं। वे अपनी भाषा की उन्नति करने का प्रयत्न कर रहे हैं। वेल्स इंग्लैण्ड का एक छोटा-सा परगना है। उसकी भाषा धूल के समान

नगण्य है। अब उसका जीर्णोद्धार किया जा रहा है।... अंग्रेजी शिक्षण स्वीकार करके हमने जनता को गुलाम बनाया है।" उनका संकेत साफ था कि भारत को गुलाम बनाने वाले तो हम अंग्रेजी जानने वाले लोग ही हैं। जनता की हाय अंग्रेजी को नहीं, हमको लगेगी।

गांधीजी के इन विचारों में अंग्रेजी शिक्षा की ठीक वैसी ही सटीक आलोचना हुई है जैसी बंकिम बाबू के लोकशिक्षा विषयक लेख में हुई थी। गांधीजी के मतानुसार जब अंग्रेज अपने देश की आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा की पद्धतियाँ बदल सकते हैं, तो फिर भारत ही क्यों उनकी परित्यक्त शिक्षा-पद्धति का अनुसरण करे? यानी भारत की शिक्षा पद्धति भी यहाँ की आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिए। दूसरी बात कि जब वेल्स जैसी उपेक्षित भाषा के उद्धार के लिए वहाँ के लोग प्रयत्न कर सकते हैं, तब भारतवासी भी क्यों नहीं अपनी भाषाओं के विकास के लिए प्रयत्नशील हों।

जब गांधी जी यह कहते हैं कि अंग्रेजी शिक्षण को स्वीकार करके हमने जनता को गुलाम बनाया है, वे अंग्रेजी शिक्षा को कथित आधुनिकता एवं ज्ञान प्राप्ति का संवाहक मानने वाले कतिपय भारतीय अभिजनों के दावे के खोखलेपन को उजागर कर देते हैं। उनकी स्पष्ट मान्यता है कि भारत की शिक्षण पद्धति इसकी अपनी जलवायु के अनुरूप अपनी भाषा में होनी चाहिए।

हिन्द स्वराज में उन्होंने संशयरहित शब्दों में अपना मत रखा है, "हमें अपनी सभी भाषाओं को चमकाना चाहिए। ... जो अंग्रेजी पुस्तकें काम की हैं, हमें उनका अनुवाद करना होगा। इस पुस्तक में प्रस्तुत विचारों को महात्मा गांधी ने भारत में और अधिक प्रचारित किया। 20 अक्टूबर, 1917 को गुजरात के द्वितीय शिक्षा सम्मेलन में उनका दिया भाषण इस दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस भाषण में उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने और मनवाने के पक्ष में बहुत ही तार्किक एवं सुव्यवस्थित ढंग से अपनी बातों को प्रस्तुत किया है, "कुछ देशभक्त विद्वानों का कहना है कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बनायी जा सकती है या नहीं, यह प्रश्न ही अज्ञानावस्था का सूचक है। अंग्रेजी तो राष्ट्रभाषा बन चुकी है। ... हमारे पढ़े-लिखे लोगों की दशा देखते हुए ऐसा मालूम पड़ता है कि अंग्रेजी के बिना हमारा कारोबार बंद हो जायेगा। तिस पर भी हम जरा गहराई से देखें, तो पता चलेगा कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती, और न उसका प्रयत्न किया जाना चाहिए। तब राष्ट्रभाषा के क्या लक्षण होने चाहिए। इस पर विचार करें :

1. वह भाषा सरकारी नौकरों के लिए आसान होनी चाहिए।
2. उस भाषा द्वारा भारत का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक कामकाज शक्य होना चाहिए।
3. उस भाषा को भारत के ज्यादातर लोग बोलते हों।
4. वह भाषा राष्ट्र के लिए आसान होनी चाहिए।
5. उस भाषा का विचार करते समय क्षणिक या अस्थायी स्थिति पर जोर न दिया जाय।

- अंग्रेजी भाषा में इनमें से एक भी लक्षण नहीं है।'

भारत की राष्ट्रभाषा के लिए इन पाँच लक्षणों को निर्धारित करने के बाद गांधीजी ने इस कसौटी पर अंग्रेजी को अयोग्य ठहराते हुए कहा - "यह माने बिना काम चल ही नहीं सकता कि हिन्दी भाषा में ये सारे लक्षण मौजूद हैं। हिन्दी भाषा मैं उसे कहता हूँ, जिसे उत्तर में हिन्दू और मुसलमान बोलते हैं और देवनागरी या फारसी (उर्दू की) लिपि में लिखते हैं।" इस तरह गांधी जी ने लिपि के अंतराल को दरकिनार करते हुए हिंदी को सर्वमान्य राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने की बात की।

उन्होंने हिंदी प्रचार अभियान को राष्ट्रसेवा के रूप में देखा था। इसीलिए उनकी संकल्पना से देश विदेश में स्थापित स्वैच्छिक हिंदी संस्थाओं ने निरन्तर इस कार्य को प्रभावी ढंग से चलाया और असंख्य लोग हिंदी भाषा और नागरी लिपि से जुड़े। हिंदी नवजीवन में प्रकाशित भाषाई चिंता स्पष्ट रूप में देखने को मिलती है, अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज ही विदेशी माध्यम के जरिये दी जाने वाली हमारे लड़कों और लड़कियों की शिक्षा बंद कर दूं और सारे शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूं या बर्खास्त करा दूं।

महात्मा गांधी हिंदी और अनेक भारतीय भाषाओं की स्वाभाविक लिपि के रूप में देवनागरी लिपि को महत्व देते हैं। सिंधु घाटी की लिपि से लेकर ब्राह्मी लिपि और देवनागरी लिपि विश्व सभ्यता को भारत की महत्त्वपूर्ण देन हैं। वर्तमान में दुनिया में तीन हजार से अधिक भाषाएं बोली जाती हैं, जबकि लिपियां चार सौ हैं। देवनागरी लिपि इस देश की अनेक भाषा और बोलियों की स्वाभाविक लिपि बनी हुई है। दुनिया में प्रचलित अन्य लिपियों से देवनागरी की तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है कि यह लिपि सबसे विलक्षण ही नहीं, पूर्णता के निकट है। लिपि के आविष्कारकों की आकांक्षा रही है कि किसी भी भाषा की विभिन्न ध्वनियों के साथ अक्षरों का सुमेल हो, उसमें कोई त्रुटि न हो इस दृष्टि से देवनागरी लिपि अधिक वैज्ञानिक और युक्तिसंगत है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से सामान्य लिपि के रूप में देवनागरी अपनाने के कट्टर हिमायती थे। लिपि की समस्या भी हिंदी, उर्दू और हिन्दुस्तानी की भाँति रही हैं, किंतु गांधी जी जानते थे कि देवनागरी लिपि ही राष्ट्रीय लिपि के योग्य है। 'हिंदी नवजीवन' के 21 जुलाई 1927 के अंक में उन्होंने कहा है, "सचमुच मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारत की तमाम भाषाओं के लिए एक ही लिपि का होना फ़ायदेमंद है और वह लिपि देवनागरी ही हो सकती है।" 'हरिजन सेवक' के 18 फरवरी 1938 के अंक में भी गांधी जी ने कहा था कि 'यदि भारत की कोई सर्वमान्य हो सकने वाली कोई लिपि है तो वह देवनागरी है।'

महात्मा गांधी मानते हैं कि भारत में भाषायी एकता के लिए एक समान लिपि की आवश्यकता है। एक स्थान पर उन्होंने लिखा है "लिपि विभिन्नता के कारण प्रांतीय भाषाओं का ज्ञान आज असंभव सा हो गया है। बांग्ला लिपि में लिखी हुई गुरुदेव की गीतांजलि को सिवाय बंगालियों के और कौन पढ़ेगा पर यदि वह देवनागरी में लिखी जाये, तो उसे सभी लोग पढ़ सकते हैं।" आज दक्खिनी हिंदी की भी यही स्थिति है, जिसका लगभग 400 वर्षों का अपार साहित्य फारसी लिपि में होने के कारण हिंदी के अध्येताओं की दृष्टि से ओझल है। कहना न होगा कि लिपिभेद के कारण हिंदी साहित्य के इतिहास की इस कड़ी को हम अभी तक जोड़ नहीं पाये हैं।

गांधी जी ने कहा है कि अगर मेरी चले तो जमी हुई प्रान्तीय लिपि के साथ साथ में सब प्रान्तों में देवनागरी लिपि और उर्दू लिपि का सीखना अनिवार्य कर दूं और विभिन्न देशी भाषाओं की मुख्य-मुख्य पुस्तकों को उनके शब्दशः हिन्दुस्तानी अनुवाद के साथ देवनागरी में छपवा दूं। गांधी जी ने स्वयं की गुजराती भाषा की पुस्तक को देवनागरी लिपि में प्रकाशित करवाया। कहा भी कि मेरा वश चले तो सभी को इसी तरह प्रकाशित करवाने का प्रयास करूंगा।

महात्मा गांधी की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए आचार्य विनोबा भावे ने नागरी लिपि के महत्व को स्वीकार किया। उन्होंने यह तक कहा कि हिंदुस्तान की एकता के लिए हिंदी भाषा जितना काम देगी, उससे बहुत अधिक काम देवनागरी देगी। इसलिए मैं चाहता हूँ कि सभी भाषाएं देवनागरी में भी लिखी जाएं। स्पष्ट है कि महात्मा गांधी के राष्ट्रभाषा हिंदी सहित भारतीय भाषाओं और नागरी लिपि सम्बन्धी विचारों को नवयुग के अनुरूप व्यापक फलक पर प्रतिष्ठित - प्रसारित करने की आवश्यकता है। तभी हम अपनी राष्ट्रीय - सांस्कृतिक पहचान के साथ एक विश्वशक्ति के रूप में भारत की महिमाशाली उपस्थिति को चरितार्थ कर सकेंगे।